रुद्राष्टाध्यायी – एक परिचय

यजुर्वेद में निहित रुद्राध्याय वैदिक काल से ही शिवमहिमा का द्योतक रहा है। भगवान् शिव की प्रसन्नता को प्राप्त करने के लिये इसका प्रयोग अनेक प्रकार से किया जाता रहा है। इसका पाठ अथवा जप समस्त वेदों के परायण के तुल्य माना गया है। इसके पाठ से व्यक्ति पापों से मुक्त हो भोगों को भोगने के बाद शिवसायुज्य को प्राप्त कर लेता है। जाबालोपनिषद् में कहा गया है कि शतरुद्रिय के जप मात्र से अमृतत्त्व की सिद्धि हो जाती है। वहीं पर आगे कहा गया है कि रुद्राध्याय में वर्णित (भगवान् शिव के) सभी नामों में अमृतत्त्व प्रदान करने की सामर्थ्य है जिनके मनन से मनुष्य मृत्युञ्जय हो जाता है।

अथ हैनं ब्रह्मचारिण उचुः किं जप्येनामृतत्वं ब्रूहीति। स होवाच याज्ञवल्क्यः शतरुद्रियेणेति एतानि एव ह वा अमृतस्य नामानि। एतैर्ह वा अमृतो भवतीति.....।(जा. उ. 3)

कैवल्योपनिषद् में शतरुद्रिय की महिमा को बताते हुए कहा गया है कि इसका एक बार भी सम्यक रूप से पाठ करनेवाला समस्त पातकों से शुद्ध हो संसारसागर से मुक्त हो जाता है, ज्ञान प्राप्त कर लेता है अथवा कैवल्य प्राप्त कर लेता है।

यः शतरुद्रियमधीते सोऽग्निपूतो भवति। स वायुपूतो भवति। स आत्मपूतो भवति। स सुरापानात्पूतो भवति। स ब्रह्महत्यायाः पूतो भवति। ..... अनेन ज्ञानमाप्नोति संसारार्णव – नाशनम्। तस्मादेवं विदित्वैनं कैवल्यं पदमश्नुते.....।(कैव. उप. 24)

शतरुद्रिय की महत्ता का उल्लेख अनेक पुराणों में पाया जाता है। उदाहरण के लिये वामन पुराण को लें। इसके अन्तर्गत एक स्थल पर 'वेन' अपनी स्तुति में भगवान् शिव का यजुर्वेद के शतरुद्रिय से तादात्म्य करता है। अर्थात् शतरुद्रिय शिवस्वरूप का बोधक है (वामनपु. सरो. माहात्म्य 26/121)। पुनः दक्ष के यज्ञ-विध्वंस के समय जब अनेक प्रमुख देवता डरकर भाग गये तब ऋषियों ने शिवजी को प्रसन्न करने के लिये शतरुद्रिय का पाठ शुरू कर दिया(वामनपु. 5/6)। विपत्ति के समय अथवा रुद्रकोप से बचने के लिये अथवा उन्हें प्रसन्न करने के लिये उस समय ऋषियों के पास शतरुद्रिय-जप से बेहतर कोई अन्य उपाय नहीं दीख पड़ा। अतः इससे शतरुद्रिय की महत्ता स्पष्ट हो जाती है।

उपनिषदों आदि के अतिरिक्त अनेक पुराणों, स्मृतियों[1], महाभारत(अनुशासन एवं द्रोणपर्व), कूर्म, लिंग, शिव, हरिवंश आदि पुराणों में शतरुद्रिय की महिमा गायी गयी है।

शतरुद्रिय के माहात्म्यसंबंधी कुछ पुराणों के विचारों के लिये इस पुस्तक के प्रथम भाग के निम्नलिखित पृष्ठ/ संदर्भ भी देखे जा सकते हैं :

---

1. **वेदमेकगुणं जप्त्वा तदह्नैव विशुध्यति। रुद्रैकादशिनीं जप्त्वा सद्य एव विशुध्यति।।** (यमस्मृति)

ब्रह्माण्डपुराण के विचारों हेतु देखें पृ. 512

लिंगपुराण के विचारों हेतु देखें पृ. 352 – 353

विष्णुधर्मोत्तरपुराण के विचारों हेतु देखें पृ. 532 – 533

सूतसंहिता का कथन है कि रुद्रजापी महापातकरूपी पंजर से मुक्त होकर सम्यक ज्ञान प्राप्त करता है और अन्त में विशुद्ध मुक्ति प्राप्त करता है। रुद्राध्याय के समान जपने योग्य, स्वाध्याय करने योग्य, वेदों और स्मृतियों में अन्य कोई मन्त्र नहीं है।

रुद्रजापी विमुच्येत महापातक पञ्जरात्।।
सम्यक ज्ञानं च लभते तेन मुच्येत बन्धनात्।
अनेन सदृशं जप्यं नास्ति सत्यं श्रुतौ स्मृतौ।।

(सूतसंहिता, यज्ञवैभवखण्ड, पूर्वभाग 2/36 – 37)

वायुपुराण में कहा गया है कि –

यश्च रुद्राञ्जपेन्नित्यं ध्यायमानो महेश्वरम्।
यश्च सागरपर्यन्तां सशैलवनकाननाम्।।
सर्वान्नात्मगुणोपेतां सुवृक्षजलशोभिताम्।
दद्यात्काञ्चनसंयुक्तां भूमिं चौषधिसंयुताम्।
तस्मादप्यधिकं तस्य सकृद्रुद्रजपाद्भवेत्।।
मम भावं समुत्सृज्य यस्तु रुद्राञ्जपेत्सदा।
स तेनैव च देहेन रुद्रः संजायते ध्रुवम्।।

(ज्वाला प्रसाद मिश्र, रुद्राष्टाध्यायी, वेंकटेश्वरप्रेस, बम्बई, पृ. 7)

अर्थात् – जो महेश्वर का ध्यान करता हुआ एक बार रुद्री का जप करता है उसका, जो शैल, वन एवं कानन सहित, सब श्रेष्ठ गुणों से युक्त अच्छे वृक्ष एवं जल से शोभित, समुद्र – पर्यन्त पृथ्वी को दान करता है, उससे भी अधिक फल होता है। अर्थात् रुद्रिजप का फल इससे अधिक होता है। जो ममत्व छोड़कर सदा रुद्रदेव (अथवा रुद्रि) का जप करता है वह उसी देह से निश्चित रूप से रुद्र हो जाता है।

पुनः कहा गया है कि –

भस्मदिग्धशरीरस्तु भस्मशायी जितेन्द्रियः।
सततं रुद्रजाप्योऽसौ परांमुक्तिमवाप्स्यति।।
रोगवान्पापवांश्चैव रुद्रं जप्त्वा जितेन्द्रियः।
रोगात्पापाद्विनिर्मुक्तो ह्यतुलं सुखमश्नुते।। (वही पृ. 8)

अर्थात् – शरीर में भस्म लगाने से, भस्म में शयन करने से, जितेन्द्रिय होकर निरन्तर रुद्राध्याय

का पाठ करने से मनुष्य मुक्त हो जाता है। और जो रोगी तथा पापी भी जितेन्द्रिय होकर रुद्राध्याय का पाठ करे तो रोग और पाप से निवृत्त होकर महासुख को प्राप्त होता है।

महामृत्युञ्जय मन्त्र की ही भाँति रुद्राष्टाध्यायी का भी समाज में काफी प्रचलन है। जहाँ-जहाँ महामृत्युञ्जय का प्रयोग होता है वहाँ-वहाँ इसका भी प्रयोग किया जा सकता है। रोगों से मुक्ति के लिये रोगानुसार लघुरुद्र, महारुद्र और अतिरुद्र का जप या अभिषेक करना चाहिये। पूर्वजन्मकृत पाप ही रोग का रूप धारण कर प्राणी को पीड़ित करता है-**'पूर्वजन्मकृतं पापं व्याधिरूपेण बाधते।'** रुद्राध्याय के जपादि से निश्चितरूप से पापों का नाश हो जाता है-**'रुद्राध्यायी मुच्यते सर्वपापैः।'** पाप के नाश होने पर रोग का नाश स्वतः हो जाता है।

शिवजी ने पार्वती से रुद्राभिषेक* का माहात्म्य बतलाते हुए कहा है कि-

सर्वकर्माणि सन्त्यज्य सुशान्तमनसो यदा।
रुद्राभिषेकं कुर्वन्ति दुःखनाशो भवेद् ध्रुवम्।।
जलेन वृष्टिमाप्नोति व्याधिशान्त्यै कुशोदकैः।
दध्ना च पशुकामाय श्रियै ईक्षुरसेन च।।
मध्वाज्येन धनार्थी स्यान्मुमुक्षुस्तीर्थवारिणा।
पुत्रार्थी पुत्रमाप्नोति पयसां चाभिषेचनात्।।
मनसा वाचा कर्मणा शुचिः संगविवर्जितः।
कुर्याद्रुद्राभिषेकं च प्रीतये शूलपाणिनः।।
सर्वान्कामानवाप्नोति लभते परमां गतिम्।

(धर्मसिन्धुः पृ. 674 की पादटिप्पणी देखें)

अर्थात्-अन्य सभी उपायों को छोड़कर निश्चितरूप से दुःखनाश के लिये शान्त मन से रुद्राभिषेक करना चाहिये। वृष्टि के लिये जल से अभिषेक करना चाहिये। व्याधि की शान्ति के लिये कुश के जल से, पशुवृद्धि की कामना पूरा करने के लिये दही से, श्रेय की प्राप्ति के लिये गन्ने के रस से, धनार्थी को मधु एवं घी से तथा मोक्षार्थी को तीर्थजल से अभिषेक करना चाहिये। मन, वाणी एवं कर्म से शुद्ध रहकर ब्रह्मचर्यपूर्वक रुद्राभिषेक करने से भगवान् शिव प्रसन्न होते हैं। जिससे सभी इच्छाओं की पूर्ति तथा परमगति प्राप्त होती है।

शतरुद्रिय के विविध रूप

ब्रह्माण्डपुराण के परिशिष्ट 'ललितोपाख्यान' के अन्तर्गत किसी स्त्री को दिये गये उपदेश में शतरुद्रिय की महत्ता का प्रतिपादन किया गया है। वहाँ कहा गया है कि इसके पाठ से सभी प्रकार के पापों से मुक्ति मिल जाती है। फिर वहीं पर उस स्त्री को शतरुद्रिय की दीक्षा प्राप्त करते हुए भी

* रुद्राभिषेक के समय आमतौर पर रुद्राष्टाध्यायी के ही मन्त्रों का प्रयोग होता है।

दिखाया गया है। (ब्रह्माण्डमहापु. 3/4/7/48-52)

ध्यात्वा हृदि महेशानं शतरुद्रमनुं जपेत्।।
ब्रह्महा मुच्यते पापैरष्टोत्तर सहस्रतः।
पापैरन्यैश्च सकलैर्मुच्यते नात्र संशयः।। (ब्रह्मा. महापु. 3/4/7/49-50)

अर्थात् – हृदय में भगवान् शिव का ध्यानकर 1008 बार शतरुद्रिय का पाठ करने से ब्रह्महत्या के पाप से छुटकारा हो जाता है, तथा अन्य सभी प्रकार के पापों से भी मुक्ति मिल जाती है, इसमें कोई संशय नहीं है।

यहाँ पर एक स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि क्या स्त्री भी शतरुद्रिय जैसे वैदिक मन्त्रों की अधिकारिणी है? परम्परा से स्त्री आदि को वैदिक मन्त्रों के पढ़ने या जप करने का अधिकार नहीं माना जाता। परन्तु इस पुराण में स्त्री को शतरुद्रिय मन्त्रों के जप करने का उपदेश दिया गया है। ऐसी स्थिति में हमारे पास दो विकल्प हैं – या तो हम स्त्री को भी वैदिक मन्त्रों (कम से कम शतरुद्रिय) के पाठ का अधिकारी मानें अथवा जिस शतरुद्रिय का उपदेश इस पुराण में किया गया है वह वैदिक न होकर पौराणिक अथवा कोई अन्य शतरुद्रिय हो सकता है।

स्कन्दमहापुराण में एक शतरुद्रिय का उल्लेख है जो वैदिक शतरुद्रिय से नितान्त भिन्न है। उस शतरुद्रिय की चर्चा हम इसी पुस्तक में अन्यत्र करेंगे। परन्तु यहाँ यह स्पष्ट हो जाता है कि 'शतरुद्रिय' एक न होकर कई हो सकते हैं। यह सत्य है कि शतरुद्रिय का वैदिक रूप ही ज्यादा प्रचलित है, जो यजुर्वेद में पाया जाता है। यजुर्वेद का शतरुद्रियसूक्त उसकी सभी संहिताओं में पाया जाता है। इन संहिताओं में थोड़े – थोड़े पाठ भेद भी हैं। इसी प्रकार शतरुद्रिय के पाठ का विधान भी अलग – अलग क्षेत्रों में अलग – अलग संहिताओं के आधार पर विकसित हुए। उत्तर भारत में वाजसनेयी संहिता के आधार पर विकसित शुक्ल यजुर्वेदीय रुद्राष्टाध्यायी का विकास हुआ। उत्तर भारत के हम लोग इसी रुद्राष्टाध्यायी से परिचित हैं।

दक्षिण में रुद्राध्याय का दूसरा रूप प्रचलित है। प्रस्तुत लेख में आगे की बातें उसी दूसरे रूप को ध्यान में रखकर ही लिखी गयीं हैं। सायण एवं भट्टभास्करकृत रुद्राष्टाध्यायी के भाष्य के आधार पर ही आगे की बातें कही जायँगी।

ब्रह्म के तीन रूप हैं। एक तो कार्यरूप सबका उपादान कारण सर्वात्मक, दूसरा सृष्टि, स्थिति तथा संहार निमित्तक पुरुष नामवाला, तीसरा अविद्या से परे निर्गुण, निरञ्जन, सत्य, ज्ञान एवं आनंद के लक्षणवाला। यह तीसरा रूप ही रुद्रदेव का मुख्य स्वरूप है। रुद्राष्टाध्यायी के सभी प्रकार के पाठों में ब्रह्म (शिव या रुद्र) के सगुण एवं निर्गुण दोनों प्रकार के रूपों का वर्णन है। परमात्मा की उपासना, भक्तिमहिमा, शान्ति, पुत्र – पौत्रादि की वृद्धि तथा निरोगता आदि अनेक वस्तुओं का वर्णन उनमें

पाया जाता है।

शिवोपासना में वैदिक शतरुद्रिय का स्थान

परब्रह्म शिव की स्तुति वेदमन्त्रों में एकादश अनुवाकों में की गयी है, जो रुद्राध्याय के नाम से प्रसिद्ध है। इस रुद्राध्याय के कारण ही यजुर्वेद को वेदों में उत्कृष्ट स्थान प्राप्त हुआ। समस्त वेदों में 'मणि' के रूप में यह रुद्राध्याय विराजमान है। यजुर्वेद के चतुर्थकाण्ड के पंचम और सप्तम प्रपाठकों में 'रुद्रप्रश्न' के नाम से रुद्रमन्त्र पाये जाते हैं। रुद्राध्याय के प्रारंभ में भगवान् रुद्र के बहुत से नाम चतुर्थी-विभक्ति-पुरस्सर हो 'नमो नमः' शब्दों से बारंबार दुहराये जाने के कारण इस विभाग का नाम नमकम् पड़ा। इसी प्रकार अन्तिम प्रपाठक के मन्त्रों में भगवान् रुद्र से अपनी मनचाही वस्तुओं की प्रार्थना 'च मे च मे' अर्थात् 'यह भी मुझे, यह भी मुझे' शब्दों की पुनरावृत्ति के साथ की गयी है। इसलिये इसका नाम 'चमकम्' पड़ा। इन दोनों नमक-चमक का समष्टि रूप ही 'रुद्राध्याय' है। इसी का दूसरा नाम 'शतरुद्रिय' है।

भगवान् रुद्र के नमस्कार से रुद्राध्याय का आरंभ प्रणवपूर्वक इस प्रकार हुआ है-'ॐ **नमो भगवते रुद्राय**'। इसका अभिप्राय है 'षड्गुणैश्वर्यसम्पन्न रुद्र को प्रणाम है।' भगवान् शिव के संहारकारी रूप का नाम घोर है। घोर रूप देखने में भयजनक होते हैं। इसीलिये शतरुद्रिय के प्रथम अनुवाक में भगवान् रुद्र के मन्यु(क्रोध) और आयुधों की स्तुति **'नमस्ते रुद्र मन्यवे.'** इत्यादि मन्त्रों से करके महादेव के क्रोध को शान्त करते हैं। **'यैवास्य घोरा तनूः तां तेन शमयति.....'** नामक श्रुति इस विनियोग का मूलाधार है। इसके बाद **'नमो हिरण्यबाहवे.'** इत्यादि मन्त्रों से लेकर आठवें अनुवाकतक के मन्त्रों से महादेव के विराट स्वरूप की स्तुति कर उन्हें प्रसन्न करते हैं। ये मन्त्र बहुत ही शक्तिशाली और भगवान् रुद्र के अत्यन्त प्रीतिपात्र माने जाते हैं। तत्पश्चात् दशम एवं एकादश अनुवाकों से उनसे अभयप्रदान की याचना की गयी है। चमकानुवाकों को रुद्राध्याय का शन्तिपाठ भी कहते हैं।

लघुरुद्र, महारुद्र और अतिरुद्र

रुद्रपाठ के तीन[1] मुख्य प्रभेदों का उल्लेख मेरुतन्त्र में पाया जाता है-

रुद्रीभिरेकादशभिः लघुरुद्रः प्रकीर्तितः।

1. शतरुद्रिय के तीन प्रकार-जपात्मक, होमात्मक एवं अभिषेकात्मक होते हैं। इनमें से जपात्मक को पाँच प्रकार का माना जाता है-रुद्र, रुद्रि, लघुरुद्र, महारुद्र एवं अतिरुद्र। 'अतिरुद्र' को सर्वोत्तम माना जाता है। रुद्रैकादशिनी के एक बार परायण का नाम रुद्र, 11 बार परायण करने पर रुद्रि तथा एकादश रुद्रि के पाठ से लघुरुद्र तथा एकादश लघुरुद्र के पाठ से महारुद्र और एकादश महारुद्र के पाठ से अतिरुद्र होता है। (अनुष्ठानप्रकाशः पृ. 151-152)

अनेन सिक्तं यैर्लिङ्गं ते न पश्यन्ति भास्करम्। (शिवोपासनांक पृ. 246)

रुद्रैकादशिनी के एक बार पारायण का नाम 'लघुरुद्र' है (इसी को रुद्रपारायण भी कहते हैं)। इस लघुरुद्र – विधि से लिंगाभिषेक करनेवाला शीघ्र ही मुक्ति प्राप्त कर लेता है।

लघुरुद्र के ग्यारह आवृत्तियों के समाहार – पाठ और जप को 'महारुद्र' कहते हैं, जिससे जप – होमादि करने से दरिद्री भी भाग्यवान् बन जाता है। महारुद्र के पाठपूर्वक किया गया होम सोमयाग का फल प्रदान करता है।

महारुद्रपाठ के एकादश आवृत्तियों से (रुद्राध्याय के 11 x 11 = 121 संख्या का पाठ करने से) समाहृत पाठविधि को 'अतिरुद्र' कहते हैं, जिससे ब्रह्महत्यादि पापों का भी नाश हो जाता है। इस पाठ की कोई तुलना नहीं है।

सदैव रुद्रजप करनेवाले को शीघ्र ही ज्ञानोदय हो जायगा। एक बार भी शुद्ध रीति से रुद्रजप प्रतिदिन करने से ज्ञान की प्राप्ति हो सकती है। 'कैवल्योपनिषद्' में भी कहा गया है कि रुद्राध्याय के एक बार नियमित जप करनेमात्र से ज्ञान प्राप्त हो जाता है तथा वह मुक्त हो जाता है.....।

यः शतरुद्रीयमधीते .....सर्वदा सकृद्वा जपेत् ..... ज्ञानमाप्नोति संसारार्णव नाशनम्।

(कै. उ. 24)

रुद्रमन्त्रों का विनियोग

भट्ट भास्कराचार्यकृत 'रुद्रनमक' के भाष्य के अन्त में रुद्रमन्त्रों के अनेकानेक विनियोग एवं उपासनापद्धतियों का विवेचन किया गया है। उनमें से कुछ का परिचय नीचे दिया जाता है –

1. श्री – वित्त – द्रव्यप्राप्ति के लिये – रुद्र, महारुद्र अथवा अतिरुद्रों में से किसी एक से अभिमन्त्रित खीर को 10000 की संख्या में हवन करने से सम्पत्ति एवं श्री की प्रचुर मात्रा में उपलब्धि बतायी गयी है।

रुद्रमहारुद्रातिरुद्राणामन्यतमं जप्त्वा पायसेनायुतं जुहुयात्। श्रियं लभते।

(रुद्राध्याय, सायण एवं भट्टभास्कर[1] पृ. 139)

'इमा रुद्राय०' (यजुः वे. 16/48) – इस मन्त्र से एक लाख की संख्या में तिलहोम करने से अशेष धन प्राप्त होता है।

वित्तकामस्य 'ईमाꣳरुद्राय' इत्यनेन तिलैः शतसहस्रं जुहुयात्। (वही पृ. 139)

अपने ही रसोई घर की अग्नि में **'प्रमुञ्च धन्वनस्त्व०'** (यजुः वे. 16/9) इत्यादि मन्त्रों से आठ हजार चरुहोम (अन्न का हवन) करने से अक्षय द्रव्य की सिद्धि होती है। (वही पृ. 140)

2. सुवृष्टि और सुभिक्ष के लिये – 'असौ यस्ताम्रो०' (यजुः वे. 16/6) इत्यादि मन्त्र से वेतस

1. रुद्राध्यायः, सायणाचार्यभट्टभास्करप्रणीतभाष्याभ्यां संवलितः, आनन्दाश्रम संस्था द्वारा 1976 में प्रकाशित।

समिधों[1] से 10000 संख्या में होम करने पर भगवान् सूर्य(रुद्र की एक अष्टमूर्ति) संतुष्ट होकर वृष्टि करते हैं। (वही पृ. 141)

प्रतिदिन दोनों संध्यायों में सूर्योपस्थान-मन्त्रों[2] के साथ-साथ उपर्युक्त **'असौ यस्ताम्रो०'** इत्यादि मन्त्र का जप करने से अक्षय अन्न की सिद्धि होती है। (वही पृ. 141)

3. रोगनाश और आयुर्वृद्धि के लिये- रविवार के दिन ब्राह्मणों को यथाशक्ति दक्षिणा देकर उनसे 1000 संख्या में शतरुद्रिय का पाठ करवाने से व्याधि का नाश होता है और वह यजमान शतायु होता है। (वही पृ. 141)

महारुद्र पाठ के उपरान्त **'आरात्ते गोघ्न०'** (वही पृ. 138) इत्यादि मन्त्र से षोडशोपचार पूजन करके उसी मन्त्र का एक हजार जप करने से आयु बढ़ती है। **'मा नो महान्तमुत०'** (यजुः वे. 16/15) इत्यादि मन्त्र से दस हजार की संख्या में तिलों की आहुतियों के चढ़ाने से बालक से लेकर वृद्धोंतक पूरे परिवार का स्वास्थ ठीक रहता है। (वही पृ. 142)

4. पुत्रप्राप्ति के लिये- **'परिणो रुद्रस्य०'** (यजुः वे. 16/50) इत्यादि मन्त्र से पीपल की समिधाओं से 10,000 की संख्या में होम और जपादि करने से आयुष्मान् पुत्र की प्राप्ति होती है। (वही पृ. 141)

5. रक्षा और क्षेम के लिये- **'नमः भवाय च०'** (यजुः वे. 16/45) तथा **'नमो ज्येष्ठाय च०'** (यजुः वे. 16/32) इन दोनों मन्त्रों से भस्म को अभिमन्त्रित कर कुमारादि ग्रहगण से पीड़ित बालकों के ललाट पर तिलक लगाने से वे ग्रहपीड़ाओं से मुक्त हो सुखी हो जाते हैं। (वही पृ. 143)

'या ते रुद्र शिवा तनूः०' इस यजुः-मन्त्र (16/2) से प्रत्येक सूत्र को हजार संख्या में अभिमन्त्रित कर रुद्रैकादशिनी का पाठ करते हुए उन सूत्रों से एकादश गांठ लगाकर बालकों और गर्भिणी स्त्रियों के हाथ में बाँध दें तो वे सुखपूर्वक रहेंगे। गर्भिणी का प्रसव सुखपूर्वक होगा। (वही पृ. 143)

अग्नि-चोर-प्राण-भय आदि संकट की परिस्थितियों में **'मीढुष्टम शिवतम०'** (यजुः वे. 16/51) मन्त्र के जप करने से व्यक्ति भयमुक्त हो सकुशल अपने घर पहुँच जाता है।

6. सर्वकामनाओं की सिद्धि के लिये- रुद्राध्याय के केवल पाठ अथवा जप से ही समस्त कामनाओं की पूर्ति हो जाती है। नमक-चमकों के प्रथमानुवाकों के सम्पुटीकरण से जप-होमादि करने के बाद रुद्राध्याय का पाठ करे और यथाशक्ति रुद्रजापी ब्राह्मणों को भोजन, वस्त्र तथा दक्षिणादि देकर सत्कार करे। इस प्रकार करने से सभी कामनाएँ सिद्ध हो जाती हैं।

---

1. वेत या नरसल की समिधा

2. सूर्योपस्थान के मन्त्र क्रमशः ॐ **उद्वयं तमसस्परि०** (यजुः वे. 20/21), ॐ **उदु त्यं जातवेदसं०**(यजुः वे. 7/41), ॐ **चित्रं देवानामु०** (यजुः वे. 7/42) तथा ॐ **तच्चक्षुर्देवहितं०** (यजुः वे. 36/24) हैं।

अथवा रुद्रमहारुद्रातिरुद्रों का यथाशक्ति जप करके उक्त संख्या में पायस चरु का होम करने से भी समस्त कामनाओं की पूर्ति होती है। (वही पृ. 138)

(यह लेख अन्य पुस्तकों जिनका संदर्भ ऊपर आया है, के अलावा गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित 'शिवोपासनांक' पर आधारित है।)

❀❀❀❀❀❀

भगवान् कृष्ण द्वारा सदाचार एवं भगवान् शिव की पूजा का उपदेश

कृष्ण नन्दजी से कहते हैं – दीपक, शिवलिङ्ग, शालग्राम, मणि, देवप्रतिमा, यज्ञोपवीत, सोना और शङ्ख इन सबको भूमि पर न रक्खे। दिन में और दोनों संध्याओं के समय जो नींद लेता या स्त्री – सहवास करता है, वह कई जन्मोंतक रोगी और दरिद्र होता है। मिट्टी, राख, गोबर – इसके पिण्ड से या बालू से भी शिवलिङ्ग का निर्माण करके एक बार उसकी पूजा कर लेनेवाला पुरुष सौ कल्पोंतक स्वर्ग में निवास करता है। सहस्र शिवलिङ्गों के पूजन से मनुष्य को मनोवाञ्छित फल की प्राप्ति होती है और जिसने एक लाख शिवलिङ्गों की पूजा कर ली है, वह निश्चय ही शिवत्व को प्राप्त होता है। जो ब्राह्मण शिवलिङ्ग की पूजा करता है, वह जीवन्मुक्त होता है और जो शिवपूजा से रहित है, वह ब्राह्मण नरकगामी होता है। जो मनुष्य मेरे द्वारा पूजित प्रियतम शिव की निन्दा करते हैं, वे सौ ब्रह्माओं की आयुपर्यन्त नरक की यातना भोगते हैं। समस्त प्रियजनों में ब्राह्मण मुझे अधिक प्रिय हैं। ब्राह्मण से अधिक शंकर प्रिय हैं। मेरे लिये शंकर से बढ़कर दूसरा कोई प्रिय नहीं है। 'महादेव, महादेव, महादेव' – इस प्रकार बोलनेवाले पुरुष के पीछे – पीछे मैं नामश्रवण के लोभ से फिरता रहता हूँ। शिव नाम सुनकर मुझे बड़ी तृप्ति होती है। मेरा मन भक्त के पास रहता है। प्राण राधामय हैं, आत्मा शंकर हैं। शंकर मुझे प्राणों से भी अधिक प्रिय हैं।

महादेव महादेव महादेवेतिवादिनः।
पश्चाद् यामि च संत्रस्तो नामश्रवणलोभतः।।
मनो मे भक्तमूलं च प्राणा राधात्मिका ध्रुवम्।
आत्मा मे शंकरस्थानं शिवः प्राणाधिकश्च मे।।

(ब्रह्मवैवर्त महापुराण, श्रीकृष्णजन्मखण्ड 75/91-92)